इकाई 16 भारतीय आर्यभाषा की तीन अवस्थाएँ

इकाई की रूपरेखा

16.0 उद्देश्य

16.1 प्रस्तावना

16.2 प्राचीन भारतीय आर्यभाषाएँ : प्रथम अवस्था

16.3 मध्यकालीन भारतीय आर्यभाषाएँ : द्वितीय अवस्था

16.4 सारांश

16.6 संदर्भ ग्रन्थ–सूची

16.7 बोधप्रश्न

16.8 अभ्यास प्रश्न

16.9 बोधप्रश्नों के उत्तर

16.0 उद्देश्य

इस पाठ के अध्ययन से आप–

- भारतीय आर्यभाषाओं की अवस्थाओं के बारे में ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
- प्राचीन भारतीय आर्यभाषाओं के काल का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
- प्राचीन भारतीय आर्यभाषाओं की विशेषताओं के बारे में जान सकेंगे।
- मध्यकालीन भारतीय आर्य भाषाओं के काल की जानकारी हो सकेगी।
- मध्यकालीन भारतीय आर्यभाषाओं के क्रमिक विकास को समझ सकेंगे।
- आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं के विकासक्रम को समझ सकेंगे।
- आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं का संक्षिप्त परिचय जान सकेंगे।
- आपको आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं में हुए परिवर्तन की जानकारी प्राप्त हो सकेगी।

16.1 प्रस्तावना

प्रिय अध्येता,

भारतीय आर्यभाषा की तीन अवस्थाएँ नामक इस पाठ में आपका स्वागत है। इस पाठ में भारतीय आर्यभाषाओं का काल की दृष्टि से विभाजन का विवेचन किया गया है। मुख्य रूप से तीन भागों में इसे बाँटा गया है– प्राचीन, मध्यकालीन एवं आधुनिक आर्यभाषाएँ। इन सभी भाषाओं में हुए विकास एवं परिवर्तन का विवेचन इस पाठ में किया गया है। अध्ययनोपरान्त विस्तार से आप जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

16.2 प्राचीन भारतीय आर्यभाषाएँ : प्रथम अवस्था

प्राचीन भारतीय आर्यभाषाओं का काल 2500 ई.पूर्व से 500 ई.पूर्व तक माना जाता है।

कुछ भाषा वैज्ञानिक इसका काल 1500 ई.पू. से 500 ई.पू. तक मानते हैं (श्री भगवान तिवारी) । प्राचीन आर्यभाषा का स्वरूप ऋग्वेद में प्राप्त होता है। कालक्रम की दृष्टि से भारतीय आर्य भाषा समूह को तीन अवस्थाओं अथवा वर्गों में बांटा गया है–

1. प्राचीन भारतीय आर्य भाषा 1500 ईसवी पूर्व से 500 ईसा पूर्व तक।
2. मध्य भारतीय आर्य भाषा 500 ईसा पूर्व से 1000 तक ।
3. आधुनिक भारतीय आर्य भाषा 1000 ईसा से लेकर आज तक।

ऋग्वेद के मंत्रों के अध्ययन से इस बात का स्पष्टीकरण होता है कि उनकी रचना भिन्न–भिन्न कालों तथा भिन्न–भिन्न स्थानों में हुई है। अतः उसके मंत्रों में भाषा की एकरूपता का अभाव पाया जाता है। इसका मूल कारण देश और काल भेद है। ऋग्वेद में कुल 10 मंडल है जिनमें प्रथम तथा दशम मंडल के मंत्रों की भाषा अपेक्षाकृत बाद की है। ऋग्वेद की रचना छन्दोबद्ध है, इसलिए इसे छन्दस् भी कहा जाता है। ब्राह्मण ग्रंथों की रचना गद्य में हुई है अतः वेदों की अपेक्षा ब्राह्मण ग्रंथ का महत्त्व अधिक है क्योंकि गद्य से किसी भाषा की वाक्य रचना प्रक्रिया का परिज्ञान होता है। ब्राह्मण ग्रंथों, प्राचीन उपनिषदों तथा सूत्र ग्रंथों का अध्ययन करने से ऐसा प्रतीत होता है कि उनकी भाषा का क्रमशः विकास हुआ है। प्राचीन भारतीय आर्यभाषा को कालक्रम के अनुसार दो भागों में विभाजित किया गया है– वैदिक संस्कृत और लौकिक संस्कृत। वैदिक साहित्य के अन्तर्गत संहिता, ब्राह्मण, आरण्यक और उपनिषद्– इन चारों की गणना होती है। संहिता से उपनिषद् तक के विकास भावधारा की दृष्टि से ही नहीं, अपितु भाषा की दृष्टि से भी महत्त्वपूर्ण है। यह अंतर शताब्दियों में ही संभव हुआ होगा। उदाहरणार्थ– निम्नलिखित उदाहरणों की तुलना रोचक है–

उपत्वाऽग्ने दिवेदिवे दोषावस्तर्धिया वयम् ।
नमो भरन्त एमसि। ऋग्वेद –1/1/7

(हे अग्नि! हम प्रतिदिन प्रातः, सायं बुद्धिपूर्वक प्रणाम करते हुए तुम्हारे पास आते हैं।)

यतो वाचो निवर्तन्ते अप्राप्य मनसा सह।
आनन्द ब्राह्मणो विद्वान् न बिभीते कुतश्चन।। –तैत्तिरीयोपनिषद्, नवम अनुवाक

(जहाँ से मन के साथ वाणी उसे न पाकर लौट आती है, उस ब्रह्म के आनन्द को जाननेवाला किसी से भयभीत नहीं होता।)

पहला उदाहरण ऋग्वेद का है और दूसरा तैत्तिरीयोपनिषद् का। ऋग्वेद के उद्धरण की भाषिक प्राचीनता बिना कहे भी स्पष्ट है। ऋग्वेद की रचना जिस भाषा में हुई वह उस समय की परिनिष्ठित साहित्यिक भाषा थी। अर्थात् वह अभिजात्य वर्ग की भाषा थी अतः उसके समांतर कोई न कोई बोली साधारण जनता द्वारा अवश्य व्यवहृत होती रही होगी । कुछ विद्वानों का विचार है कि संस्कृत का विकास वैदिक भाषा से हुआ है। इसके विपरीत कुछ विद्वानों का यह भी मानना है कि संस्कृत का विकास तत्कालीन प्रयुक्त किसी बोली से हुआ है जो राजनीतिक आदि कारणों से अभिव्यक्ति का महत्त्वपूर्ण माध्यम बन गई पर संस्कृत के महत्त्व को पाने के बाद भी साधारण जन द्वारा बोली जाने वाली भाषा अंततः सलिला की तरह आम जनता के हृदय को शीतल करती रही और आगे चलकर वही अर्वाचीन भाषाओं का विकास स्रोत बन गई। पाणिनी काल तक वैदिक भाषा तथा साधारण जन–जन की भाषा में अत्यधिक दूरी

पड़ गई थी। भाषा विभेद के कारण बुद्ध काल तक भाषा के तीन विभाग हो गए थे । उदीच्य,प्राच्य तथा मध्य देशीय।

प्राचीन भारतीय आर्यभाषा के अंतर्गत वैदिक तथा लौकिक संस्कृत की गणना होती है। संस्कृत शब्द को कभी–कभी दोनों का बोधक माना जाता है और कभी–कभी केवल लौकिक संस्कृत का। वैदिक भाषा से ही लौकिक संस्कृत का विकास हुआ है। संस्कृत की स्थिति को समझने के लिए खड़ी बोली का उदाहरण लिया जा सकता है। खड़ी बोली मेरठ के आसपास के कुछ जिलों की बोली है किन्तु राजनैतिक, आर्थिक, व्यापारिक आदि कारणों से वह अन्य बोलियों की तुलना में बहुत आगे निकल गई और आज संपूर्ण भारत की राष्ट्रभाषा बन गई है। इसी तरह संस्कृत भी समसामयिक इतर भाषाओं की तुलना में अधिक आगे निकल गई और भारत की सांस्कृतिक भाषा बन गई, किन्तु जो भाषाएँ उस समय जनसाधारण में प्रचलित रही होंगी उनका विकास अवरुद्ध नहीं हुआ होगा। उनसे भारत की अनेक वर्तमान भाषाओं का विकास हुआ होगा। 'संस्कृत' शब्द से वैदिक का भी बोध होता है किन्तु उससे भेद दिखाने के लिए संस्कृत के पहले लौकिक विशेषण लगा दिया जाता है। संस्कृत उस समय की शिष्ट भाषा थी जो बोलचाल के अतिरिक्त साहित्य रचना का भी माध्यम थी। उसमें अभिव्यंजना की कुछ ऐसी विशेषताएँ आ गईं कि हजारों वर्षों बाद भी वह आज अपनी महत्ता बनाए हुए है।

16.2.1 वैदिक एवं लौकिक संस्कृत में साम्य वैषम्य

वैदिक संस्कृत में धातुरूपों का बाहुल्य है पर लौकिक संस्कृत में धातु रूप में विविधता नहीं मिलती है। जैसे–

वैदिक	लौकिक
इमसि,इमः	इमः
स्मसि,स्मः	स्मः
शेये,शेते	शेते

प्रातिपदिक के विभक्तियों के शब्दरूपों का बाहुल्य है ।

	वैदिक	लौकिक
प्रथमा बहुवचन	रुद्रा रुद्रसः	रुद्राः
तृतीया	पूर्वेभिः,पूर्वैः	पूर्वैः
सप्तमी	अग्नौ,अग्ना	अग्नौ

- वैदिक भाषा में 11 लकार हैं। लेकिन लौकिक में केवल 10 लकार है लौकिक संस्कृत में लेट् लकार का अभाव पाया जाता है।
- वैदिक भाषा में लौकिक संस्कृत की अपेक्षा लुङ् लकार का प्रयोग अधिक होता है।
- वैदिक भाषा में तुमुन् प्रत्यय के जो रूप चलते थे उनमें उसके अर्थ में 8–10 प्रत्ययों का प्रयोग मिलता है। जैसे– तवै,ध्यै,असे आदि से पातवै, गमध्वै, जीवसे आदि। पर लौकिक संस्कृत में इसके लिए केवल एक रूप अर्थात् तुमन् से गन्तुम्,कर्तुम्,पठितुम् आदि का प्रयोग होता है । जहां वैदिक भाषा में वर्णों की संख्या 64 है वही लौकिक संस्कृत में मात्र 50 (कहीं–कहीं 52) वर्ण हैं। वैदिक

भाषा में कुछ ऐसे शब्द हैं जिनके लौकिक अर्थों में अन्तर दिखाई पड़ता है–

शब्द	वैदिक अर्थ	लौकिक अर्थ
वध	भयंकर शस्त्र	मार डालना ।
न	इव	नहीं
अरि	ईश्वर,निवास स्थान	शत्रु
क्षिति	गृह, मनुष्य	पृथ्वी

- वैदिक संस्कृत में तीन प्रकार के स्वर थे उदात्त,अनुदात्त और स्वरित । पर लौकिक संस्कृत में ये तीनों भेद नहीं हैं। वैदिक भाषा में जो संगीतात्मक स्वराघात था उससे अर्थ में भी परिवर्तन होता था। उदाहरणतः वैदिक भाषा में स्वर में ही यह बोध होता था कि वह संज्ञा है या विशेषण। वैदिक भाषा में प्राप्त संगीतात्मकता लौकिक संस्कृत से दूर हो गई। लौकिक संस्कृत में संगीतात्मक स्वराघात की जगह बलाघातात्मक स्वराघात का प्रयोग होने लगा।

- वैदिक भाषा में स्वर के कारण समास में भी अंतर आ जाता है यदि आदि में उदात्त स्वर हो तो बहुव्रीहि समास होता है और यदि उदात्त स्वर अंत में हो तो तत्पुरुष समास होता है। जैसे– इंद्र–शत्रु।

- वैदिक भाषा में तत्पुरुष,कर्मधारय,बहुव्रीहि, द्वंद्व ये चार समास थे किंतु लौकिक संस्कृत में इन चारों के अलावा द्विगु और अव्ययीभाव का भी प्रयोग होने लगा। इस प्रकार लौकिक संस्कृत में कुल 6 समास हो गयें।

- वैदिक भाषा में उपसर्ग क्रिया से दूर रहते थे जैसे प्र–बभ्रवे श्वितिभाय श्वितिचे । पर लौकिक संस्कृत में इनका प्रयोग क्रिया के पूर्व होता है ।

- वैदिक भाषा में कर्ता बहुवचन के साथ एकवचन की क्रिया का प्रयोग होता है था किंतु लौकिक संस्कृत में कर्ता वचन के अनुसार ही क्रिया का व्यवहार होता है। जैसे– वैदिक में आभ्राः खादति।

- वैदिक भाषा में विशेषण एवं विशेष्य में विभिन्नता पाई जाती थी किंतु लौकिक संस्कृत में इनमें सामंजस्य पाया जाता है।

- पाणिनि ने अष्टाध्यायी की रचना कर संस्कृत को व्याकरण के नियमों से प्रतिबंधित कर दिया और अपने समय में इसे शिष्ट समाज के परस्पर विचार विनिमय की भाषा बना दिया। संस्कृत को देववाणी भी कहा गया है। आज भारतवर्ष ही नहीं,सारा संसार संस्कृत से प्रभावित है भाषा विज्ञान की जननी संस्कृत हैं। वैदिक संस्कृत की सामान्य विशेषताओं का ज्ञान आपने पूर्व पाठ में प्राप्त किया है।

16.3 मध्यकालीन भारतीय आर्यभाषाएँ : द्वितीय अवस्था

मध्यकालीन आर्यभाषा ही प्राचीन भारतीय आर्यभाषाओं की द्वितीय अवस्था है। इसका काल 500 ई. पूर्व से 1000 ई. तक माना जाता है। इसे प्राकृतकाल भी कहते हैं। इसके तीन स्तर हैं– प्रथम प्राकृत, द्वितीय प्राकृत एवं तृतीय प्राकृत।

16.3.1 प्रथम प्राकृत

इसका काल 500 ई. पूर्व से ईसवी सन् के आरंभ तक माना जाता है। इसके अन्तर्गत पालि और अशोक के अभिलेख आते हैं। प्राकृत भाषा की उत्पत्ति को लेकर विद्वान् एकमत नहीं हैं। इस संबंध में तीन मत उपस्थित किए गए हैं–

1. संस्कृत से प्राकृत की उत्पत्ति हुई है। जैसा कि हेमचन्द्र ने कहा है– **'प्रकृतिः संस्कृतम्। तत्र भवं ततः आगतं वा प्राकृतम्।'** अर्थात् संस्कृत मूल है और उससे जो उत्पन्न हुई, उसे प्राकृत कहते हैं। इस मत के अनुसार संस्कृत में रूप परिवर्तन होने से प्राकृत की उत्पत्ति हुई।

2. दूसरा मत यह है कि प्राकृत का ही संस्कार कर संस्कृत का निर्माण हुआ। इसकी पुष्टि स्वयं 'संस्कृत' शब्द से होती है। जिसका संस्कार हुआ हो, वह संस्कृत है। इस मत के समर्थक कहते हैं– प्रकृत्या स्वभावेन सिद्धं प्राकृतम्। अर्थात् जो स्वभावसिद्ध हो, वह प्राकृत है। कहने का तात्पर्य है कि स्वाभाविक, सहज या साधारण भाषा प्राकृत है। उदाहरणस्वरूप– तुलसीदास ने इन्हें **''प्राकृत जनगुण गाना।''** कहा है। यहाँ 'प्राकृत' शब्द का प्रयोग उन्होंने साधारण के अर्थ में ही किया है।

3. तीसरा मत यह है कि न तो संस्कृत से प्राकृत उत्पन्न हुई और न प्राकृत से संस्कृत। दोनों का पृथक्–पृथक् स्वतंत्र रूप में विकास हुआ। संस्कृत के समानांतर जो जनभाषाएँ थीं, उन्हीं का विकसित रूप प्राकृतें हैं।

   1 . सिंहदेवमणि के विचार से प्रकृत संस्कृत से प्राकृत का आगमन हुआ–

   प्रकृते संस्कृतात् आगतम वा प्राकृतम् ।

   2 . वासुदेव का कहना है कि संस्कृत ही प्राकृत की जननी है–

   प्राकृतस्य सर्वमेव संस्कृत योनिः ।

   3 . मार्कण्डेय के विचार से प्रकृत का मूल संस्कृत है, इससे जिस भाषा का जन्म हुआ है, उसे प्राकृत कहा जाता है–

4. **प्रकृतिः संस्कृतम् तत्र भवं प्राकृतमुच्यते।**

5. लक्ष्मीधर प्राकृत को प्रकृत संस्कृत की विकृति मानते हैं–

   प्रकृते, संस्कृतावास्तु विकृति प्राकृतीमता।

6 . कुछ विद्वान प्राकृत को अकृत्रिम या नैसर्गिक भाषा मानते हैं। इनके अनुसार प्राकृ त प्रकृत है और संस्कृत कृत्रिम या सुसंस्कृत अर्थात् प्राकृत का संस्कार ही संस्कृ त है। संस्कृत का अर्थ ही है कि संस्कार किया हुआ। कहा भी गया है–**प्रकृत्या स्वभावेन सिद्धम् प्राकृतम्** अर्थात् सहज या साधारण भाषा प्राकृत है।

7 . कुछ भाषाविदों का कहना है कि न तो संस्कृत से प्राकृत निष्पन्न हुई है और न प्राकृत से संस्कृत वैदिक भाषाकाल तथा संस्कृत काल में जो बोलियाँ साधारण जनता द्वारा प्रयुक्त होती थीं, उन्हीं से प्राकृतों का विकास हुआ।

ऊपर लिखे गये मतों में से अन्तिम विचार (सातवाँ मत) भाषावैज्ञानिक दृष्टि से हुआ है जो अधिक न्याय संगत प्रतीत होता है।

प्रथम प्राकृत के रूप में पालि का स्वरूप प्राप्त होता है। पालि शब्द की व्युत्पत्ति के विषय में हम पहले जान चुके हैं।

16.3.2 द्वितीय प्राकृत

मध्यकालीन प्राकृत को ही द्वितीय प्राकृत कहते हैं। इसे साहित्यिक प्राकृत भी कहते हैं। प्राकृत भाषा के विषय में सर्वप्रथम भरतमुनि ने 'नाट्यशास्त्र' में निर्देश किया है। सात मुख्य और सात गौण प्राकृतों का भी उल्लेख नाट्यशास्त्र में प्राप्त होता है।

16.3.3 तृतीय प्राकृत

तृतीय प्राकृत के अन्तर्गत अपभ्रंश आते हैं। अपभ्रंश में अनेक रचनाएँ प्राप्त होती हैं। अपभ्रंश की प्रमुख विशेषताओं के विषय में हम पहले जान चुके हैं। 'अपभ्रंश' शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम 'महाभाष्य' में मिलता है। भामह, दण्डी आदि ने भी इसका उल्लेख किया है।

प्राकृत भाषाओं का ज्ञान मुख्यतः संस्कृत नाटकों एवं जैन साहित्य में प्राप्त होता है।

16.3.4 प्राचीन भारतीय आर्यभाषाएँ : तृतीय अवस्था

इसे आधुनिक भारतीय आर्यभाषा भी कहते हैं। इसका काल 1000 ईसवी से वर्तमान समय तक माना गया है। आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं का विकास अपभ्रंश अथवा तृतीय प्राकृत से हुआ है। प्राकृतों के आधार पर ही अपभ्रंशों की कल्पना की गयी है, अर्थात् जहाँ जो प्राकृत बोली जाती थी वहाँ उसी के अपभ्रंश रूप का विकास हुआ। प्राचीन पाँच प्राकृतों से पाँच अपभ्रंश भाषाएँ विकसित हुई हैं।

पश्चिमी हिन्दी की पाँच प्रमुख बोलियाँ हैं :– ब्रजभाषा, खड़ीबोली, बाँगड़, कन्नौजी और बुन्देली। राजस्थानी भाषा की चार बोलियाँ हैं– मेवाती, मारवाड़ी, मालवी और जयपुरी। राजस्थान के उत्तर में मेवाती, पश्चिम में मारवाड़ी, दक्षिण में मालवी और पूर्व में जयपुरी का क्षेत्र माना जाता है। गुजराती गुजरात की भाषा है। गुजराती का राजस्थानी और पश्चिमी हिन्दी से साम्य है। गुजराती की अलग लिपि है जो देवनागरी का ही रूपांतर है। यह कैथी से मिलती–जुलती है। पूर्वी हिन्दी में तीन बोलियाँ– अवधी, बघेली और छत्तीसगढ़ी आती है। असमी भाषा की बंगला से बहुत अधिक समानता है। असमी की लिपि कुछ परिवर्तित बंगला लिपि ही है। उड़िया का भी बंगला से अत्यधिक साम्य है। इसकी लिपि प्राचीन देवनागरी से ही विकसित हुई है।

ये पाँच अपभ्रंश एवं विकसित भारतीय आर्य भाषाएँ हैं–

शौरसेनी	पश्चिमी हिन्दी, राजस्थानी, गुजराती ।
महाराष्ट्री	मराठी।
मागधी	भोजपुरी, मैथिली, मगही, बंगला, उड़िया, असमी, खस–पहाड़ी।
अर्धमागधी	पूर्वी हिन्दी, अवधी, बघेली, छत्तीसगढ़ी।
पैशाची या केकय	लहँदा, पंजाबी।

16.3.5 आधुनिक भारतीय आर्यभाषा की सामान्य विशेषताएँ

1. आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं में वह ध्वनियाँ लिखी तो जाती हैं पर उनका उच्चारण शुद्ध नहीं हो पाता। उत्तर भारत में ऋ का उच्चरण रि होता है और दक्षिण भारत में रु। जैसे ऋषि–रिशि, दक्षिण में ऋषि का उच्चारण रुषि होता है।

इस प्रकार 'ष' का उच्चारण श हो गया। कभी–कभी कुछ लोग स कहते हैं।

2. ज्ञ संयुक्त अक्षर है। प्रदेश भेद के कारण इसका उच्चारण ग्यँ, जयँ तथा द्यँ होता है। सामान्यतः इसका उच्चारण ग्य होता है किन्तु आर्यसमाजी इसे ज्यँ के रूप में उच्चरित करते हैं और मराठी भाषी ।
3. हिन्दी भाषी क्षेत्र के पुरविया लोग ब और व के उच्चारण में भेद नहीं करते। दोनों का उच्चारण व के रूप में करते हैं। इसी प्रकार ज, य दोनों का उच्चारण ज सुनाई पड़ता है।
4. क्ष का उच्चारण कछ किया जाता है। दूसरे वर्णों के संयोग होने पर व् तथा ण का उच्चारण नहीं हो पाता। उदाहरणतः दण्डझ दंड, चञ्चल झ चंचल । संस्कृत के संयुक्ताक्षरों के उच्चारण आभिजात्य वर्ग अधिकतर सही ढंग से करता है।
5. आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं में क, ख, ग, ज, च, द्र, फ जैसी विदेशी ध्वनियों का आगम हो गया है। ये ध्वनियाँ स्वीकृत तो हो गई हैं पर इनका व्यवहार कुछ ही लोग सही ढंग से करते हैं।
6. स्वर के स्थान पर बल की प्रधानता हो गई है फिर भी वाक्य में स्वर का व्यवहार भी पाया जाता है।
7. वचन में संख्या तीन की जगह दो हो गई है। अर्थात् एक वचन और बहुवचन ।
8. आधुनिक युग में नपुंसक का ह्रास हो गया है। मराठी, गुजराती में तो तीनों लिंगों का प्रयोग होता है पर हिन्दी, पंजाबी आदि भाषाओं में पुल्लिंग और स्त्रीलिंग का प्रयोग होता है।
9. आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं में द्वित्व व्यंजन के स्थान पर एक का लोप तो पाया जाता है पर पूर्ववर्ती अक्षर में क्षतिपूरक दीर्घता मिलती है। जैसे, कर्मझ कम्मझ काम,निद्रा झ णिद्दा झ नींद, सत्तझ सात, अद्य झ अज्ज झ आज ।
10. शब्द–रूपों की संख्या घटकर दो रह गई है–विकृत और अविकृत।
11. अपभ्रंश–काल तक की शब्द–सम्पदा अधिकांशतः स्वदेशी थी पर मुसलमानों तथा अंग्रेजों के आगमन के कारण अरबी–फारसी तथा अंग्रेजी के अनेक शब्द आधुनिक भाषाओं में धड़ल्ले से प्रयुक्त हो रहे हैं।
12. अंग्रेजी, जर्मन, फ्रेंच आदि यूरोपीय भाषाओं की तरह आधुनिक भारतीय आर्यभाषाएँ श्लिष्ट योगात्मक अवस्था से अयोगात्मक हो गई हैं।

16.4 सारांश

भारतीय आर्यभाषाओं की तीन अवस्थाएँ प्राप्त होती हैं। ये तीन अवस्थाएँ– प्राचीन भारतीय आर्यभाषा, मध्यकालीन भारतीय आर्यभाषा एवं आधुनिक भारतीय आर्यभाषाएँ हैं। प्राचीन भारतीय आर्यभाषाओं के अन्तर्गत वैदिक और लौकिक संस्कृत आते हैं। इसका समय 2500 ई. पूर्व से 500 ई. तक निर्धारित किया गया है। इसके अन्तर्गत वैदिक संस्कृत की ध्वनियाँ एवं वैदिक भाषा की प्रमुख विशेषताएँ आती हैं। लौकिक संस्कृत वाल्मीकिरामायण से प्रारंभ होकर अद्यावधि वर्तमान है। लौकिक संस्कृत की विशेषताओं एवं वैदिक एवं लौकिक संस्कृत में साम्य–वैषम्य का विवेचन इसमें मिलता है। मध्यकालीन भारतीय आर्यभाषा को प्राकृत काल भी कहा गया है जिसमें पालि, प्राकृत और अपभ्रंश आते हैं। अपभ्रंश से ही आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं का विकास हुआ

है जैसे– **शौरसेनी**– पश्चिमी हिन्दी, राजस्थानी, गुजराती। **महाराष्ट्री**– मराठी। **मागधी**–भोजपुरी, मैथिली, मगही, बंगाला, उड़िया, असमी, खस–पहाड़ी **अर्धमागधी**– पूर्वी हिन्दी, अवधी, बघेली, छत्तीसगढ़ी। **पैशाची या केकय**– लहँदा, पंजाबी।

16.5 शब्दावली

संहिता – वैदिक ग्रंथ (ऋक्संहिता, यजुर्वेद संहिता, सामवेद संहिता, अथर्ववेद संहिता)

उपनिषद् – उप+नि+सद् से निष्पन्न जिसका अर्थ है गुरु के समीप बैठकर अध्ययन करना)

आरण्यक – अरण्य अर्थात् जंगल में बैठकर साधना के साथ लिखे गए ग्रंथ आरण्यक कहलाते हैं। इसे रहस्य विद्या भी कहते हैं।

ब्राह्मण – वेदों के मंत्रों की सहज व्याख्या करने वाले ग्रंथ।

दिवेदिवे – प्रतिदिन

धिया – बुद्धि से, बुद्धि द्वारा।

निवर्तन्ते – लौट जाते हैं, लौट आती हैं।

शिष्ट – सम्मानित, परिष्कृत।

प्रकृत्या – स्वभावेन–स्वतः

भाषिक – भाषाओं से सम्बद्ध

साम्य – समानता–एक जैसा

कैथी – प्राचीन कार्यालयी लिपि

अभिव्यंजना – अभिव्यक्ति का माध्यम

नाट्यशास्त्र – आचार्य भरतमुनि विरचित 36 अध्यायों का नाट्यशास्त्रीय ग्रन्थ

महाभाष्य – पतंजलि विरचित व्याकरण भाष्य

16.6 संदर्भ ग्रन्थ–सूची

1. Phonetics in Ancient India ; W.S.k~ Allen, London, 1953
2. पालि भाषा का परिचय एवं उसका व्याकरण, खण्ड–1 मुक्तस्वाध्यायपीठम्, राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान, नई दिल्ली, 2014
3. भाषा विज्ञान एवं भाषा शास्त्र डॉ. कपिलदेव द्विवेदी, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, बारहवाँ संस्करण, 2010
4. भाषा विज्ञान की भूमिका– आचार्य देवेन्द्रनाथ शर्मा, राधाकृष्ण प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली, प्र.सं.–1966, अष्टम संस्करण–1986
5. भाषा विज्ञान– डॉ. भोलानाथ तिवारी, किताबमहल, अंसारीरोड, दरियागंज, नई दिल्ली
6. सामान्य भाषा विज्ञान– बाबूराम सक्शेना, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, 1971
7. वैदिकवाङ्मयस्येतिहासः भारतीय संस्कृतिश्च, खण्ड–1 वैदिक साहित्यम् मुक्तस्वाध्यायपीठम् राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान, नई दिल्ली–2015

16.7 बोध प्रश्न

1. प्राचीन भारतीय आर्यभाषा का काल क्या है?
2. प्राचीन भारतीय आर्यभाषा का मुख्य स्वरूप कहाँ प्राप्त होता है?
3. ऋग्वेद को 'छन्दस्' क्यों कहा जाता है?
4. ब्राह्मण ग्रंथ मुख्यतः किस विधा में लिखे गए हैं?
5. भारत की राष्ट्रभाषा क्या है?
6. प्राकृत भाषाओं का ज्ञान मुख्यतः किस पर आधारित है?
7. प्रथम प्राकृत के अन्तर्गत कौन–कौन आते हैं?
8. हेमचन्द्र के अनुसार, प्राकृत किसे कहते हैं?
9. प्राकृत को क्या कहते हैं?
10. प्राकृतों और आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं के बीच की संयोजक कड़ी क्या है?
11. 'प्राकृत जनगुण गाना' पद्य में प्राकृत पद से तुलसीदास का क्या तात्पर्य है?
12. प्राकृत काल किसे कहा जाता है?
13. आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं का विकास किससे हुआ है?
14. आधुनिक भारतीय आर्यभाषाएँ कौन–कौनसी हैं?
15. आधुनिक भारतीय आर्यभाषा का काल बतावें।

16.8 अभ्यास प्रश्न

1. प्राचीन भारतीय आर्यभाषाओं का सामान्य परिचय दें।
2. मध्यकालीन भारतीय आर्यभाषाओं की विशेषताओं का विवेचन करें।
3. आधुनिक भारतीय आर्यभाषाएँ कौन–कौनसी हैं ? संक्षेप में विवेचन करें।
4. वैदिक संस्कृत और लौकिक संस्कृत में साम्य और वैषम्य को दर्शाएँ।
5. पालि की प्रमुख विशेषताओं का विवेचन करें।
6. प्राकृत की विशेषताओं का वर्णन करें।

16.9 बोधप्रश्नों के उत्तर

1. प्राचीन भारतीय आर्यभाषा का काल 2500 ई.पू. से 1000 है।
2. प्राचीन भारतीय आर्यभाषा का मुख्य स्वरूप ऋग्वेद में प्राप्त होता है।
3. छन्दोबद्ध होने के कारण ऋग्वेद को 'छन्दस्' कहा जाता है।
4. ब्राह्मण ग्रंथ मुख्यतः गद्य विधा में लिखे गए हैं।
5. भारत की राष्ट्रभाषा खड़ी बोली (हिन्दी) है।
6. प्राकृत भाषाओं का ज्ञान मुख्यतः संस्कृत नाटकों एवं जैन साहित्य पर आधारित है।

7. प्रथम प्राकृत के अन्तर्गत पालि और अशोक के अभिलेख आते हैं।
8. हेमचन्द्र के अनुसार प्राकृत की परिभाषा है– 'प्रकृतिः संस्कृतम् तत्र भवम् ततः आगतम् वा प्राकृतम्'।
9. प्राकृत को साहित्यिक प्राकृत कहते हैं।
10. प्राकृतों और आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं के बीच की संयोजक कड़ी अपभ्रंश है।
11. 'प्राकृत जनगुण गाना' पद्य में प्राकृत पद से तुलसीदास का तात्पर्य 'साधारण' से है।
12. प्राचीन भारतीय आर्यभाषा के द्वितीय काल को प्राकृत काल कहा जाता है।
13. आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं का विकास अपभ्रंश से हुआ है।
14. आधुनिक भारतीय आर्यभाषाएँ हैं– पश्चिमी हिन्दी, राजस्थानी, गुजराती, मराठी, भोजपुरी, बिहारी, बंगाली, उड़िया, असमी, पूर्वी हिन्दी, लहँदा, सिन्धी, पंजाबी, पहाड़ी आदि।
15. आधुनिक भारतीय आर्यभाषा का काल 1000 ई. से वर्तमान समय तक।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY